ISSN: 0973-0583

बिहार के सरकारी विद्यालयों में शिक्षिकाओं की भागीदारी: एक समीक्षा

मो0 मंसूर आलम

शोधार्थी, शिक्षा विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

डॉ0 एम0 ए0 खान

अध्यक्ष, शिक्षा विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

शोध सार

बिहार में शिक्षा के बुनियादी पुनर्गठन के इस महत्वपूर्ण क्षण में महिलाएँ बड़ी संख्या में स्कूली शिक्षण के क्षेत्र में प्रवेश कर रही हैं। व्यापक संरचनात्मक निर्धारक, विचारधाराएँ और प्रथाएँ जो वेतनभोगी कार्यबल के साथ-साथ घरेलू क्षेत्र में शिक्षिकाओं को परिभाषित और विनियमित करती हैं, ऐतिहासिक रूप से संबंधित हैं और समकालीन संदर्भ में सामाजिक पुनरुत्पादन को समझने के लिए इनकी जाँच महत्वपूर्ण है। यह शोध-पत्र शिक्षा क्षेत्र में नवउदारवादी नीति सुधार से उत्पन्न विवादास्पद और भौतिक संदर्भों पर चर्चा करता है जो महिला स्कूल शिक्षकों के जीवन को आकार दे रहे हैं और उन्हें नया रूप दे रहे हैं। बिहार में शिक्षकों की बहाली में कक्षा 01 से 08 तक 50 प्रतिशत एवं कक्षा 09 से 12 तक 35 प्रतिशत महिला शिक्षकों को आरक्षण दिया गया है। इससे काफी संख्या में महिलाएँ विद्यालय में अध्यापन कार्य कर रही हैं। महिलाओं को विद्यालय में कार्य करने से कई तरह की स्थिति में बदलाव आया है। उन्हें भूमिका संघर्ष से गुजरना पड़ रहा है। विद्यालय में शिक्षिकाओं की भागीदारी से शिक्षण माहौल में सुधार हुआ है खासकर छात्राओं की सहभागिता में वृद्धि हुई है।

मुख्य-शब्द: शिक्षिकाएँ, सामाजिक पुनरुत्पादन, नारीवादी दृष्टिकोण, नवउदारवादी सुधार।

परिचय

कई दशकों तक भारत व बिहार की महिलाएँ उपेक्षित रही। परन्तु 1990 के दशक के बाद महिलाओं की स्थिति में तीव्र गति से परिवर्तन हुआ। महिलाओं के शैक्षिक दर में वृद्धि हुई तथा महिलाएँ शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने लगी। जाहिर है कि शिक्षक बनना महिलाओं की पहली पसन्द की आजीविका बनने लगी। श्री नीतीश कुमार की सरकार ने जब नियोजन के माध्यम से शिक्षकों की बहाली प्रारंभ की तो महिलाओं को आरक्षण देकर शिक्षक बनने का विशेष अवसर प्रदान किया। इससे विद्यालय में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई। 1990 के दशक के बाद से भारत में सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संबंधों में बदलाव की सीमा को दर्शाता है, जो बदलाव आर्थिक पुनर्गठन के हिस्से के रूप में हुए हैं और उससे प्रभावित होते रहे हैं। स्कूल क्षेत्र के भीतर, पिछले दो दशकों में नवउदारवादी सुधारों ने कुशलतापूर्वक शिक्षा प्रदान करने में सार्वजनिक स्कूली शिक्षा की मौलिक अक्षमता की धारणा को बढ़ावा दिया है। हालाँकि यह वास्तव में उन सभी बहसों को पूरी तरह से शामिल नहीं कर सकता है जो शिक्षा पर नवउदारवादी प्रवचनों को रेखांकित करती हैं।[1]

यहाँ जो प्रश्न उठाये जा रहे हैं। वे इस आधार पर हैं कि बिहार में शिक्षा के बुनियादी पुनर्गठन के इस महत्वपूर्ण क्षण में स्कूली शिक्षण के क्षेत्र में बड़ी संख्या में महिलाएँ प्रवेश कर रही हैं, जो स्कूली शिक्षा में नीतिगत बदलावों की आश्चर्यजनक श्रृंखला के भीतर कुछ हद तक भयावह और जटिल स्थिति में हैं। महिला शिक्षकों की स्थिति के आकलन में कमी है, चाहे वह स्थान (ग्रामीण/शहरी या अर्ध-ग्रामीण/शहरी) के संबंध में हो, या स्कूली शिक्षा की स्तरीकृत प्रणालियों के संबंध में हो, जिनकी ऐतिहासिक जड़ें लंबी होने के बावजूद, सुधारों के बाद इन्हें नया रूप दिया जा रहा है और गहरा किया जा रहा है। जैसे, निजी गैर-सहायता प्राप्त स्कूल, निजी-सार्वजनिक प्रबंधन के तहत राज्य स्कूल, कम शुल्क वाले निजी स्कूल, नए ग्रामीण आवासीय स्कूल जैसे कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय और विशिष्ट अंतरराष्ट्रीय स्कूल, जिनमें से सभी शैक्षिक सुधारों के व्यापक दायरे में नियंत्रण के नए रूपों को लाया जा रहा है। वर्ग, जाति, जातीयता और धर्म की उनकी सामाजिक पहचान के संबंध में स्कूलों में महिलाओं

के अनुभवों के बारे में भी कम जानकारी है।[2]

ज्ञान में इन अंतरालों को स्वीकार करते हुए और निस्संदेह कई अन्य हैं जिन पर ध्यान नहीं दिया गया है। इस तरह की जाँच सार्थक है क्योंकि महिला स्कूल शिक्षकों को एक ओर परिवार और स्कूल के भीतर श्रम के स्थानों द्वारा तैयार किया जाता है, जबकि दूसरी ओर दोनों स्थानों पर उनके जीवन के लैंगिक आयामों को आर्थिक परिवर्तनों द्वारा पुनर्निर्धारित और पुनर्गठित किया जा रहा है। सामाजिक पुनरुत्पादन और नियंत्रण में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका, राज्य के साथ इसका संबंध, और सबसे महत्वपूर्ण रूप से आधुनिक समाजों में पहचान निर्माण के लिए इसकी सामग्री और वैचारिक जुड़ाव को देखते हुए, शिक्षा यह समझने के लिए एक महत्वपूर्ण स्थल बन जाती है कि महिलाएँ सुधार के प्रवचन में कैसे स्थित हैं। सामाजिक पुनरुत्पादन की रूपरेखा ऐसी जाँच में उपयोगी है क्योंकि यह हमें महिला शिक्षकों के जीवन पर सुधारों के विवेकशील और भौतिक प्रभावों की जाँच करने की अनुमति देती है और वे पुनरुत्पादन के दो सबसे महत्वपूर्ण स्थलों परिवार और स्कूल पर कैसे बातचीत करती हैं।[3] कभी-कभी उन्हें भूमिका संघर्ष से भी गुजरना पड़ता है। चूँकि भारतीय पितृसत्तात्मक व्यवस्था में अभी भी कार्यरत महिलाओं को घरेलू कार्य की जिम्मेदारी पूर्ण करने की अपेक्षा की जाती है जिसके तहत घरेलू दायित्वों एवं विद्यालय के कर्त्तव्य निर्वहण में कठिनाई उपस्थित होती है।

शिक्षिकाएँ, स्कूली शिक्षा और सामाजिक सहभागिता: निरंतर असुविधा

शिक्षिकाओं का काम और जीवन, औपचारिक स्कूल शिक्षा के क्षेत्र की तरह, भारतीय संदर्भ में नारीवादी जाँच से बाहर रहा है। पश्चिम में, शिक्षा में नारीवादी विमर्श नागरिक अधिकारों और महिला आंदोलनों में शिक्षिकाओं की सक्रियता से विकसित हुआ। नारीवादी शिक्षाशास्त्र के विचार नारीवादी सक्रियता के भीतर लामबंदी के अनुभवों से प्राप्त हुए। भारतीय संदर्भ में शिक्षा के साथ नारीवादी जुड़ाव की कमी भारत में एक दुर्भाग्यपूर्ण अनुपस्थिति बनी हुई है- विशेष रूप से महिलाओं के जीवन के लगभग सभी अन्य क्षेत्रों के साथ इसके महत्वपूर्ण जुड़ाव को देखते हुए। जबकि 1970 और 1980 के दशक में लिंग और विकास पर अंतर्राष्ट्रीय बहस ने महिला शिक्षा के मुद्दों पर राज्य के साथ उत्पादक जुड़ाव के लिए कुछ जगह खोली, चुनौतीपूर्ण पितृसत्तात्मक संरचनाओं और संबंधों में शिक्षा की परिवर्तनकारी भूमिका को मोटे तौर पर कम करके आंका गया है। नारीवादी विद्वानों और कार्यकर्ताओं के आलोचनात्मक हस्तक्षेप के अभाव में, भारत में लिंग और शिक्षा के क्षेत्र में 'कल्याण प्रतिमान को स्पष्ट रूप से स्वीकार करने की प्रवृत्ति रही है जिसके अंतर्गत शिक्षा आम तौर पर राज्यवादी प्रवचनों के भीतर स्थित रही है। हमने अलग और स्कूल पाठ्यक्रम के मुद्दों के साथ अकादमिक जुड़ाव देखा जाता है, शुरुआत में हिंदू अधिकार के रूढ़िवादी शैक्षणिक एजेंडे और महिलाओं की शिक्षा के पुनर्रचना के लिए एक राजनीतिक प्रतिक्रिया के रूप में जैसा कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, एन.सी.एफ में प्रमाणित है जो एनसीएफ 2005 के निर्माण में अंतर्निहित प्रक्रियाओं द्वारा प्रदान की गई जगह के माध्यम से पाठ्यक्रम नीति के साथ गहन जुड़ाव तक विस्तारित हुआ। एन.सी.एफ. 2005 ने सामाजिक संबंध में स्कूली ज्ञान की फिर से कल्पना करने की आवश्यकता को पहचाना।[4] बच्चों के जीवन के आर्थिक और राजनीतिक संदर्भों ने और महिला अध्ययन विद्वानों और कार्यकर्ताओं को स्कूली शिक्षा में लैंगिक मुद्दों पर एक स्थिति पत्र तैयार करने के लिए एक साथ आने में सक्षम बनाया, जो स्पष्ट रूप से समकालीन नारीवादी चिंताओं को सामने लाया। फिर भी, यह महत्वपूर्ण है कि शिक्षा और समाज के बीच संबंध-राज्य की भूमिका, वर्ग, जाति और लिंग असमानता का सामाजिक पुनरुत्पादन, ज्ञान की राजनीति, श्रम और कामुकता- समकालीन संदर्भ में नारीवादी प्रवचन के भीतर अज्ञात क्षेत्र बने हुए हैं। परिणाम स्वरूप, पश्चिम में नारीवादी जाँच के विपरीत, जिसने महिला शिक्षकों के काम की अंतर्निहित संरचनाओं, विचारधाराओं और प्रथाओं, उनके काम के वर्गीकृत, नस्लीय और लिंग आधारित आयामों और प्रभाव पर बड़ी मात्रा में शोध किया है। उनके अभ्यास में सुधारों के बारे में हमारे पास भारत में महिला शिक्षकों पर शिक्षा सुधारों के लिंग आधारित प्रभाव के बारे में बहुत कम जानकारी है।[5]

भारत में शिक्षकों के काम के बारे में हमारी समझ में समकालीन क्षण, एक बार फिर नारीवादी दृष्टिकोण से शिक्षा की जाच करने में एक महत्वपूर्ण समस्या खड़ी करता है जैसे शिक्षा के क्षेत्र को सामाजिक और सांस्कृतिक पुनरुत्पादन की व्यापक प्रक्रियाओं के हिस्से के रूप में देखना। यह प्रयास महिला शिक्षा में प्रमुख विरोधाभासों में से एक को सामने लाता है। जैसा कि स्ट्रोमक्विस्ट (1995) आग्रह करते हैं, एक राज्य तंत्र के रूप में शिक्षा के

वैचारिक क्षेत्रों से जुड़ना महत्वपूर्ण है। वे कहते हैं, नारीवादी चेतना के बिना महिलाओं के लिए शिक्षित होना अपेक्षाकृत आसान है।[6] जाहिर है कि बिना नारीवादी चेतना के महिलाएँ शिक्षित होकर शिक्षिका के दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वहण करती हैं। सरकार का भी ध्यान इस ओर गया है। इसलिए वह महिलाओं को शिक्षित करने और शिक्षिका बनने में आरक्षण की सुविधा देकर उसकी भागीदारी को सुनिश्चित कर रही है। ज्ञातव्य है कि महिलाएं वर्तमान में गठित अर्थव्यवस्था और परिवार में अधिक और बेहतर योगदान देने में सक्षम हो जाएं, जबकि उनकी बढ़ी हुई स्कूली शिक्षा से यथास्थिति को खतरा न हो और ... वैचारिक और भौतिक वर्चस्व की बुनियादी संरचनाएँ बरकरार और कायम हैं। इस अर्थ में, शिक्षण को लैंगिक श्रम के रूप में देखने से विश्लेषण में कई आयाम जुड़ते हैं, जैसे, यह अहसास कि जब किसी पेशे (जैसे शिक्षण) में पुरुषों को महिलाओं द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है, तो कार्य का मूल चरित्र परिवर्तित शक्ति स्थानों और शासन के कारण बदल जाता है। सामान्य कार्यस्थल में महिलाओं के साथ कुछ भेद-भाव भी देखा जाता है। लेकिन विद्यालय स्तर पर महिलाओं को इस तरह के भेद-भाव का सामना नहीं करना पड़ता है। वॉकरडाइन का कहना है कि समाज की बड़ी संरचनाओं के भीतर महिला शक्ति की कमी, शिक्षक द्वारा अपेक्षित अधिकार के साथ प्रतिवाद, महिला शिक्षक को एक 'असंभव कल्पना' के रूप में निर्मित करती है।[7]

यह असंभवता महिला शिक्षकों की लिंग आधारित व्यक्तिपरकता के कारण उत्पन्न होती है, उन्हें 'पोषण की अवधारणा के अंदर फंसा देती है जो उन्हें शिक्षा के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति को मुक्त करने के लिए जिम्मेदार ठहराती है। यह कल्पना स्कूल के कार्यस्थल में बच्चों की देखभाल की उनकी कथित आंतरिक क्षमताओं की वैचारिक तैनाती के माध्यम से समायोजित की गई है।[8] ज्ञातव्य है कि दुनिया भर में शिक्षिकाओं की सबसे अधिक संख्या प्रारंभिक स्तर पर पाई जाती है।

स्वतंत्रता के बाद भारत में स्कूली शिक्षा शिक्षित महिलाओं के लिए रोजगार का एक महत्वपूर्ण स्थान बन गई। औपचारिक शिक्षा के विस्तार ने शिक्षित महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर प्रदान किया, साथ ही शिक्षकों के रूप में उनके काम को छात्रों की देखभाल तक सीमित कर दिया। बड़ी संख्या में शिक्षिकाओं का प्रवेश सीधे तौर पर राज्य की शिक्षा के सार्वभौमिकरण की परियोजना तक पहुंच के विस्तार से संबंधित था, विशेष रूप से शिक्षा में लड़कियों की भागीदारी बढ़ाने के प्रयासों से। यह विरोधाभासी विरासत- महिलाएँ शिक्षा और सवेतन रोजगार के सार्वजनिक स्थान की तलाश में हैं, लेकिन शिक्षण के 'देखभाल पेशे' के भीतर, लैंगिक समानता के विकासात्मक लक्ष्य के लिए महत्वपूर्ण हैं- कुछ नारीवादी असुविधा पैदा करती है। यह इतिहास एक साथ उच्च शिक्षा स्तरों पर महिलाओं के विषय विकल्पों पर प्रतिबंध के माध्यम से ज्ञान पर पितृसत्तात्मक नियंत्रण के लिए एक संस्थागत स्थल के रूप में शिक्षा के स्थान को दर्शाता है- उदाहरण के लिए, विज्ञान या मानविकी पर शिक्षा- और इसलिए निर्माण करते समय लिंग का सामाजिक पुनरुत्पादन होता है। एक ऐसा स्थान जिसे सवैतनिक रोज़गार के लिए वैध माना जाता है, अर्थात, स्कूल क्षेत्र।[9]

उपरोक्त चर्चा उन प्रश्नों के लिए एक संभावित रूपरेखा तैयार करती है जो हम समकालीन समय में पूछ सकते हैं, जब नवउदारवादी सुधार भारत में शिक्षा के परिदृश्य को आश्चर्यजनक गति से प्रभावित कर रहे हैं, संस्थागत स्थानों और उनके भीतर सामाजिक संबंधों को फिर से परिभाषित और पुनः कॉन्फिगर कर रहे हैं। नीति में बदलाव और शिक्षा में राज्य की भूमिका का बुनियादी पुनर्गठन उन तरीकों के लिए महत्वपूर्ण है जिनसे नवउदारवादी नीतियां स्कूल शिक्षण में कार्यरत महिलाओं के जीवन को प्रभावित कर रही हैं। महिला शिक्षकों का विमर्श, देखभाल के मानक संघों के भीतर स्त्रीत्व और मातृत्व को भुगतान वाले रोजगार के स्थान के रूप में स्कूली शिक्षा के विमर्श में शामिल करना, समस्याग्रस्त है, क्योंकि महिलाएं दैनिक कार्यों की प्राथमिक जिम्मेदारी' भी लेती हैं। घर के सदस्यों की शारीरिक ज़रूरतें, छोटे बच्चों की देखभाल और बीमारों की देखभाल, और घर की उत्पादक गतिविधि में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। जाहिर है कि ये श्रम के क्षेत्र हैं जो संरचनात्मक सुधारों से समान रूप से प्रभावित होते हैं। हम समसामयिक सन्दर्भ का विश्लेषण कैसे करते हैं, इस संदर्भ में उत्पादक होने के लिए, ये जुड़ाव निजी/सार्वजनिक या पुनरुत्पादन/उत्पादन द्वैतवाद के भीतर बड़े करीने से समाहित नहीं हैं, बल्कि संभावित मुद्दों के एक विशाल विस्तारित सेट का संकेत देते हैं। विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि महिलाएँ पुरूष की अपेक्षा बेहतर ढंग से शिक्षक के दायित्वों का निर्वहण करती है। उनमें धैर्य, सहनशीलता आदि गुण पाये जाते हैं। साथ ही वे छात्रों के साथ बहुत जल्दी

घूल-मिल जाती है जिससे छात्रों के शिक्षण में सहूलियत होती है। खासकर लड़कियों के पठन-पाठन में महिला शिक्षकों की भूमिका सराहनीय हैं। इसलिए वर्तमान समय में विद्यालयों में लड़कियों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है तथा लड़कियाँ परीक्षाओं में बढ़ियाँ कर भी रही है। कई परीक्षाओं में तो लड़कों से लड़कियों की शैक्षणिक उपलब्धि अधिक अच्छी होती है।

निष्कर्ष:

शिक्षकों पर नवउदारवादी हमला एक ऐतिहासिक क्षण में हुआ है जब अधिक से अधिक महिलाएँ शिक्षा और सवेतन रोजगार की संभावनाओं तक पहुँच रही हैं। महिला शिक्षकों की बढ़ती संख्या के आंकड़े इन सभी क्षेत्रें में पितृसत्तात्मक नियंत्रण के नए रूपों के भीतर एक पहचान और कुछ हद तक शक्ति हासिल करने के लिए पारिवारिक, शैक्षिक और कार्य क्षेत्रों में भारी संघर्ष की कहानियों को छिपाते हैं। स्पष्ट रूप से यह देखने की आवश्यकता है कि शिक्षा क्षेत्र में सुधार शिक्षिकाओं की व्यक्तिगत और व्यावसायिक पहचान की भावना को कैसे प्रभावित कर रहे हैं। इसके लिए हमें विभिन्न संदर्भों में स्कूलों के साथ-साथ घरों में सामाजिक/लिंग संबंधों और काम के सामाजिक संगठन पर व्यापक आर्थिक सुधारों के प्रभाव, काम के नए आयामों को समायोजित करने के लिए पारिवारिक रणनीतियों में बदलाव और 'नए' आयाम की जांच करने की आवश्यकता होगी। सुधार प्रक्रिया शिक्षकों को उनके स्थान से वंचित करने में बनी हुग्र है। वह इस महत्वपूर्ण मुद्दे को उठाती हैं कि क्या, सूचना के प्रसारण के रूप में शिक्षा की प्रमुख कथा पर सवाल उठाते हुए, राज्य द्वारा स्थापित सुधार के एक निष्क्रिय एजेंट के रूप में शिक्षक की धारणा को चुनौती नहीं दी जा सकती है। एनसीएफ 2005 के बाद नई पाठयचर्या रूपरेखा महिला शिक्षक को विशेष रूप से मातृ तरीके से गठित कर रही है। साथ ही, उदाहरण के लिए, सामाजिक पुनरुत्पादन के अन्य आयाम भी हैं, जिनसे पता चलता है कि बदली हुए व्यवस्था में शिक्षिकाएँ और कुशलतापूर्वक अपने कार्यों का संपादन करे तथा छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करें। गुणवत्ता और 'व्यावसायिकता' के प्रवचनों ने सत्ता के नए शासन स्थापित किए हैं। शिक्षकों पर प्रशासनिक और गैर-शैक्षणिक कार्य का बोझ बढ़ गया है, निगरानी और विनियमन के सख्त नियम हैं, यह सब कथित तौर पर छात्रों की जरूरतों के हित में है। शिक्षक स्वायत्तता की कमी और शिक्षा की बड़ी परियोजना से अलगाव की रिपोर्ट करते हैं, जिससे आदर्श शिक्षक का निर्माण 'विकासात्मक राज्य के अनुपालन एजेंट' के रूप में होता है। बिहार में वर्तमान समय में स्कूली शिक्षा व्यवस्था में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहा है। छात्रों की संख्या में वृद्धि एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की बात हो रही है। शिक्षिकाएँ अपने दायित्वों का निर्वहण कर विद्यालयी शिक्षा के उद्देश्यों को पूर्ण करने में अपनी महत्ती सहभागिता को साबित कर रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. अग्रवाल, एस.पी.,और अग्रवाल, जे.सी. (1992) भारत में महिला शिक्षा. नई दिल्ली: कॉन्सेप्ट पब्लिलिशिग कंपनी.
2. अहमद, के. (1979) भारत में शिक्षित कामकाजी महिलाओं का अध्ययन: रुझान और मुद्दे, इकोनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 14(33), 1435-1440
3. बॉल, एस.जे. (2003) शिक्षक की आत्मा और प्रदर्शनशीलता का भय, जर्नल ऑफ एजुकेशन पॉलिसी, 18(2), 215-228
4. बत्रा, पी. (2005). शिक्षक की आवाज़ और एजेंसी: राष्ट्रीय पाठयक्रम ढांचे 2005 में मिलसग ललक, इकोनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 40(40), 1-7 अक्टूबर, 4347-4356
5. चनाना, के. (2002) हाशिये से देखें. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 37(36), 3717-3721
6. डीम, आर. (2001)वैश्वीकरण, नया प्रबंधकीयवाद, अकादमिक पूंजीवाद और विश्वविद्यालयों में उद्यमशीलता: क्या स्थानीय आयाम अभी भी महत्वपूर्ण है? तुलनात्मक शिक्षा,37(1), फरवरी, 7-20
7. डिलबॉफ, जे.-ए. (1999) लैंगिक राजनीति और आधुनिक शिक्षक की अवधारणाएँ: महिला पहचान और व्यावसायिकता, ब्रिटिश जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी ऑफ एजुकेशन, 20(3), 373-394।
8. गोलवदा, आर., और जोसेफिन, वाई. (2005), भारत में पारा-शिक्षक: एक समीक्षा, समसामयिक शिक्षा संवाद, 2(2), 193-224
9. हुड, सी. (1991), सभी मौसमों के लिए एक सार्वजनिक प्रबंधन, लोक प्रशासन, 69(वसंत), 4-5

❖❖❖